बदलते परिप्रेक्ष्य में
राष्ट्रीय समाज के सामने
खड़ी चुनौतियां

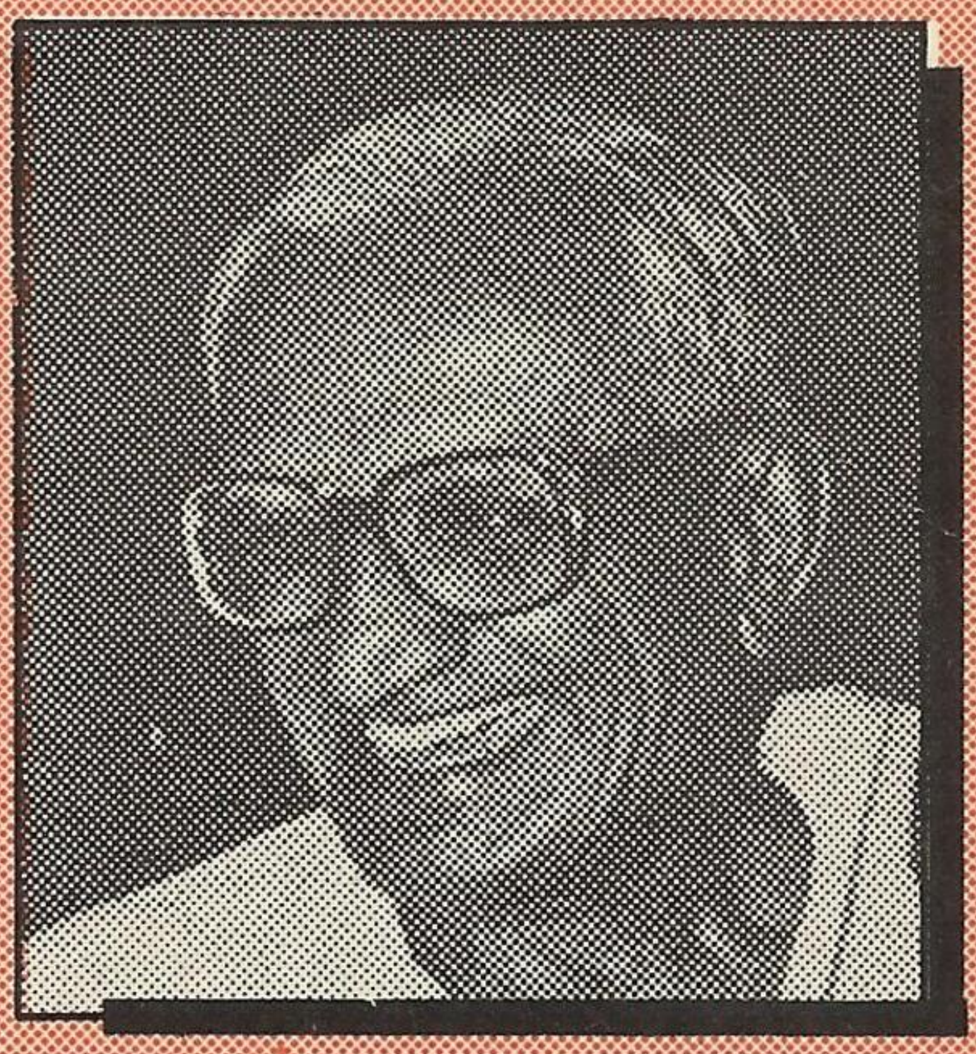

मा. दत्तोपन्त ठेंगडी का उद्बोधन

पुणे, २८-७-९६

स्वस्तिश्री प्रकाशन

बदलते परिप्रेक्ष्य में

राष्ट्रीय समाज के सामने खड़ी चुनौतियां

मा. दत्तोपन्त ठेंगडी का उद्‌बोधन

पुणे, २८-७-९६

स्वस्तिश्री प्रकाशन

प्रकाशक :

स्वस्तिश्री प्रकाशन
"स्वस्तिश्री"
४४/९, नवसह्याद्री सोसायटी
नवसह्याद्री पोस्टासमोर,
पुणे ४११ ०५२.
दूरध्वनी : ३४१३२१.

◆

द्वितीय आवृत्ती - १००० प्रति
फाल्गुन शुद्ध द्वितीया शके १९१८
श्री रामकृष्ण जयंती
१० मार्च १९९७

◆

सर्व हक्क हिंदुजनाधीन

◆

अक्षर जुळणी, रचना व मुद्रण :

समर्थ एंटरप्रायजेस
२११ शुक्रवार पेठ, पुणे ४११ ००२.
फोन नं. ४७९३७२

◆

किंमत रु. २०

॥ श्रीराम ॥

सस्नेह नमस्कार,

जागृति व्यासपीठ पुणे, द्वारा आयोजित साप्ताहिक गोष्टीसत्रों में विविध सामाजिक एवं राष्ट्रीय विषयों पर सर्वांगीण चर्चा होती है। अगस्त १९९६ की तीन बैठकों में माननीय श्री. दत्तोपन्त ठेंगडी के, दि. २८-७-९६ की "प्रज्ञाभारती" बैठक में समापन के अवसर पर दिये गये महत्त्वपूर्ण व्याख्यान पर विभिन्न पहुलओं से चर्चा हुई, एवं ज्येष्ठ सदस्य श्री. वसन्तराव गीत के सुझाव पर सहमति व्यक्त की गयी कि इस व्याख्यान का पुस्तिका के रूप में शीघ्रतिशीघ्र प्रकाशन किया जाय।

मूळ हिन्दी भाषण के मराठी एवं अंग्रेजी में सरल अनुवाद करा कर उन्हें प्राथमिकता से प्रकाशित किया गया, एवं अब इस पुस्तिका द्वारा मा. श्री. ठेंगड़ीजी का मूल उद्‌बोधन अविकल्प रूप से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। इस व्याख्यान की ध्वनि-मुद्रित (ऑडिओ) प्रति भी उपलब्ध मांग के अनुसार करायी जा सकती है। इस हिन्दी संस्करण के निर्माण में प्रा. उत्तम कानिटकर ने विशेष सहयोग दिया है।

आशा है कि वर्तमान समय के अनुकूल इस मौलिक चिन्तन एवं मार्गदर्शन से, सभी कार्यकर्ता एवं समाजहितैषी लाभान्वित होंगे। समर्थ श्री रामदास स्वामी जी के चरणों में इस प्रयास को सफल करने की प्रार्थना।

भवदीय,

शाम आपटे

स्वस्तिश्री प्रकाशन

श्रीसमर्थ रामदास स्वामीजी ने की हुई प्रभू रामचंद्रजी की प्रार्थना

कल्याण करी रामराया।
जन हित विवरी ॥ध्रु. ॥

तळमळ तळमळ होतचि आहे।
हे जन हाती धरी ॥१॥

अपराधी जन चुकतचि गेले।
तुझा तूंचि सावरी ॥२॥

कठीण त्यावरी कठीण जालें।
आतां न दिसे उरी ॥३॥

कोठें जावें काय करावे।
आरंभिली बोहरी ॥४॥

दास म्हणे आम्ही केलें पावलों।
दयेसि नाहीं सरी ॥५॥

मा. दत्तोपंत ठेंगडी जी का भाषण (मूल हिन्दी में)

भाषण प्रारंभ करने के पहले एक उल्लेख मैं करता हूँ। प्रज्ञा भारती की यहा बैठक रही। यह प्रज्ञा भारती क्या है? इसका प्रयोजन क्या है? इसे चलानेवाले लोग राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघके प्रचारक है। संघकी अपनी एक योजना १९२५ से ही चल रही है। परमपूजनीय डॉक्टरजीने हम लोगों के सामने साध्य-साधन-विवेक रखा। 'परं वैभवं नेतुम् एतत् स्व राष्ट्रम्' यह साध्य। 'विधाय अस्य धर्मस्य संरक्षणम्' यह साधन। और इसका आधार 'विजेत्री च नः संहता कार्यशक्तिः॥' हमारी हिंदूओं की विजयशालिनी संगठित शक्ती, यह आधार। इस आधार पर धर्म का संरक्षण। उसके फलस्वरूप हिंदुराष्ट्रका परमोदय हो। ये साध्य-साधन-विवेक उन्होंने रखा।

और आगे कहा कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इसमें से पहला जो आधारभूत कार्य है, वही करेगा। **संपर्क, संस्कार, स्वयंसेवक, संगठन**! बहुत कठिन काम है। बहुत कठिन कार्य संघ करेगा। उस पर पूछा गया 'परं वैभवम्' के लिए राष्ट्रजीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कई कार्य खडे करने की आवश्यकता है। विचारों का विकास करने की आवश्यकता है। आप केवल दक्ष-आरम ही करेंगे तो यह सब कैसे होगा? तो कहा गया कि हम लोग दक्ष-आरम ही करेंगे। दुसरा कोई भी काम संघ नही करेगा। लेकिन हिंदुस्थानमें कोई भी भला काम ऐसा नही रहेगा जो करणीय है और नही हुआ! संघ संघटनही करेगा; किंतु संघ से प्रेरणा और संस्कार प्राप्त किये हुए स्वयंसेवक राष्ट्रजीवनके विभिन्न क्षेत्रोंमें प्रवेश करेंगे, इस तरहसे राष्ट्रपुनर्निर्माण का कार्य होगा। यह पहले से सोचा गया। उस के परिणाम आज हम देख भी रहे हैं।

कार्यों की रचना एवं विचारों का विकास, यह स्वयंसेवकों की जिम्मेदारी। संघ और स्वयंसेवकों में कार्य का विभाजन है । संघ ने संगठन और स्वयंसेवकों का निर्माण करना, और स्वयंसेवको ने राष्ट्रके लिये योग्य विचार और कार्य का निर्माण करना। इस के अनुकूल समय के साथ साथ विभिन्न क्षेत्रों में स्वयंसेवकों ने प्रवेश किया। काम शुरु किये।

परमपूजनीय डॉक्टर जी द्रष्टा थे। उनकी दूरदृष्टि (लाँग रेंज थिंकिंग) थी। मौलिक चिन्तन था। १९२५ मे तो संघ की स्थापना हुई वह कोई यकायक आवेशमें आकर या किसी प्रतिक्रिया के रूपमें नही थी। सालों तक उन्होंने विचार किया था। उसके परिणाम स्वरूप संघ़ का निर्माण हुआ। यह बडी

बृहत दूरगामी योजना है। उसके अंतर्गत यह कार्य चल रहा है। जैसे जैसे अलग अलग क्षेत्रों में स्वयंसेवक काम करने लगे, उन्होंने ठीक ढंगसे कार्यों की रचना, विचारों का विकास किया।

किंतु एक व्यावहारिक कठिनाई दीखने लगी। हरेक क्षेत्र में जैसे काम बढता है, कार्य की व्याप्ती बढती है। फिर संघटन है, आंदोलन है, अपने विषयों का अध्ययन है। जैसे कार्यका विस्तार होने लगा, वैसे विचारों का विकास करने की क्षमता होते हुए भी, उसके पीछे जो समय और शक्ति लगाना चाहिये वह निभाना विभिन्न क्षेत्रों के कार्यकर्ताओं के लिये थोडा कठिन होने लगा। इस कारण उसकी पूर्ती करनेके लिए, सोचा गया कि कुछ एजेन्सी होनी चाहिए। कुछ माध्यम होना चाहिये। वह पूर्ती करने के लिए 'प्रज्ञाभारती' माध्यम का निर्माण किया गया है।

अलग अलग समय पर जो बातें झूठ हैं उनका प्रचार योजनापूर्वक बुद्धिपुरस्पर हमें गुमराह करने के लिए पूर्व में हुआ है, आज भी हो रहा है। यह सबसे बडी समस्या हमारे सामने है। हम उन्हें पुराने मिथक (Old myths) कहेंगे। कुछ नए मिथक भी हमारे सामने आए है। उन के कारण क्या कठिनाई निर्माण हुई वह आप सब जानते है। उसका केवल निर्देश करना पर्याप्त होगा।

हिंदूओंको आत्मविस्तृत बनानेके लिए और उनके मनमें हीनता का भाव निर्माण करने के लिए, मेकॉलेके वैचारिक नेतृत्वमें एक नीति निर्धारित की गयी। जिसके अंतर्गत कई मिथक, माने गलत विचार प्रचारित किये गए। शिक्षा के माध्यम से, साहित्य के माध्यम से, गलत थिअरी के माध्यम से और इतिहास के विकृतीकरण के माध्यम से। इन गलत विचारोंको इंग्लिश-शिक्षित विद्वानों ने स्वीकार किया, और जनतामें उनका प्रचार किया। लंबे समय तक ये गलत विचार ही अधिकृत सत्य के नाते स्वीकार कर लिए। उनको आव्हान देने का विचार भी किसीके मनमें नही आया। ये मिथक, ये गलत विचार सर्वपरिचित है

प्रबुद्ध लोग जानते है की समय बीतते राष्ट्रभक्त विद्वानोंने इन विचारों को आव्हान दिया। सत्य बातें जनता में प्रचारित करनेका प्रयास किया। मेकॉले-प्रणीत नीति की सफलता के कारण गलत विचार तथा सिद्धान्त लोगों

के मन में इतने दृढमूल हो गये थे कि राष्ट्रभक्त लोगों को कई दशको तक उन्हें सहना पडा। अंग्रेजप्रणीत असत्य सिद्धान्तही (मिथक) हावी रहें किंतु सातत्यके साथ और हिंमत के साथ राष्ट्रभक्त लोगों ने अपना प्रचारकार्य जारी रखा। इसके फलस्वरूप जनतामे जागृति आना प्रारंभ हुआ। सत्य सिद्धान्तों और असत्य सिद्धान्तों की लडाई बराबरीके स्तरपर प्रारंभ हुई। धीरे धीरे सत्य सिद्धान्तों का प्रचार बलवान होने लगा। पाँसे पलटते गए। असत्य सिद्धातों को बचाव पक्ष लेना पडा। सत्य सिद्धान्तों ने आक्रमण की भूमिका ठान ली। यह लडाई आज भी जोरों से चल रही है। ये असत्य सिद्धान्त हमारे सामने बडी वैचारिक चुनौतियाँ बनकर आये थे। ऐसे असत्य सिद्धान्त अनेक है, और एकेक के बारे में विस्तृत चर्चा हो चुकी है, और चल रही है। जैसे-

१. हिंदुस्थान यह कभी भी एक राष्ट्र नही रहा। यह निर्माणाधीन राष्ट्र (नेशन इन् मेकिंग) है।
२. यह एक राष्ट्र नही। इसलिए इसकी कोई राष्ट्रीय संस्कृती भी नही। यहां मिलीजुली संस्कृती (कंपोझिट कल्चर) है।
३. आर्यों ने भी बाहर से आ कर आक्रमण किया और यहां के मूल निर्वासियों को परास्त कर अपना अधिराज्य यहां जमाया था।
४. जिस तरह मुसलमान और अंग्रेज बाहर से आये वैसेही आर्य भी बाहर से आये और उन्हों ने मूल निवासियोंको कुचल दिया। हिंदू उन आर्यों के वंशज है अत: यहाँ के मूल निवासी नही हैं। वे ही उतनेही पराये आक्रमक है जितने कि मुसलमान और अंग्रेज। यहां के मूल निवासी द्रविड लोग है। उनका अलग राष्ट्र है। अलग संस्कृती है। अलग भाषा है। इसे नष्ट करने का प्रयास उत्तर भारतके आर्य हिंदू कर रहे है।
६. धर्म और रिलीजन समानार्थी है।
७. आर्य यह वंशवाचक शब्द है। गुणवाचक नहीं।
८. राष्ट्र और राज्य भी समान है।
९. संस्कृत मृत भाषा है।
१०. हिंदू या एक रिलिजन मात्र है और हिंदुत्व सांप्रदायिक है। हिंदुत्व धर्मनिरपेक्षता का विरोधक है।
११. अंग्रेजोंके यहाँ आनेके पूर्व यहाँ कोई सभ्यता थी ही नही। विज्ञान एवं तंत्रज्ञान (साइंस एवं टेक्नोलोजी) का संपूर्ण अभाव था।

१२. उच्च वर्गों का ज्ञान पर एकाधिकार था। उन्होंने बहुजन समाज को जान बूझकर अज्ञानमे रखा था, ताकि अल्पसंख्य वरिष्ठ वर्ग का प्रभुत्व संपूर्ण समाजपर अबाधित कायम रहे। उच्चतर वर्ग के इन लोगों ने बडी चतुराई से जनता को संभ्रमित करते हुए उनपर ऐसी विषमतापूर्ण समाजरचना थोपी थी, जिसमें इन चन्द लोगों का प्रभुत्व समाज पर बना रहे और बहुसंख्य होते हुए भी बहुजनसमाज उच्च अल्पसंख्यों की गुलामी में रहे। इन बहुजनसमाजविरोधी रचनाओंको धर्म, वर्णव्यवस्था, तथा जाती व्यवस्था आदि नाम देकर धार्मिक मान्यता प्रदान कर दी। यहाँ का बेसिक युनीट 'जाती' माना गया, 'राष्ट्र' नही।

इन सब मिथ्या विचारों को इंग्लिश शिक्षित विद्वानों ने स्वीकार किया। इन विद्वानों ने ये गलत विचार समाजमें प्रस्तुत किये। इन गलत सिद्धान्तों का तर्कशुद्ध खंडन अब हो चुका है। जनमानस की भ्रांतिया दूर होना प्रारंभ हो गया है। गलत प्रचार करनेवाले अब बगलें झांकने लगे हैं। सत्यसिद्धान्त आगे बढ रहे है। वैचारिक क्षेत्रमें नया मोड आ चुका है। विचारों की सही दिशा मे प्रगती होना प्रारंभ हो गया है।

लोगोंको ध्यानमें आ रहा है कि,

- India is a multnational state यह प्रचार गलत है। भारत has been and still continues to be a multistate Nation यही सिद्धान्त सही है।
- पाकिस्तान और बांगलादेश are states without Nationhood.
- India is a multicultural Nation. ऐसा कहना गलत है। Hindu is multi-dimentional culture, यही वास्तविकता है।
- हिंदू नाम का कोई रिलिजन नही। हिंदूओंके कई रिलिजन्स है। किंतु There is a Hindu view of religion. Religion is a strictly personal affair as strictly personal as one's own toothbrush. Hindu view of religion is all-embrassing, all inclusive. इसी कारण महात्मा गांधीजीने कहा था कि इस्लाम और खिश्चनिटी भी हिंदूइझम के अंतर्गत आसानीसे समाविष्ट हो सकते है।
- बृहस्पती चार्वाक प्रणीत 'लोकायतंत्र' (मटेरियालिझम) भी इसका एक अंग है।
- हिंदू view of relegion की विशेषता है, हम दो शब्द इंग्रजीमें जानते है, 'Either or' और 'As well as'. हिंदू विचार Either-or-ism नहीं मानता, As-well-as

ism यह इस की हिंदुत्व मान्यता है। इसी कारण मुसलमानों के विषयमें सुयोग्य नीति यह सोची गयी थी की उनका पुरस्कार नही, तुष्टीकरण नही, बहिष्कार भी नही, मात्र **परिष्कार**।

Hindu and Human are Synonimous right from the dawn of civilisation, we are always identified ourselves with the mankind. Therefore all our thinking, our prayers are for the benefit of all the human beings.

इसी कारण प्राचीन संस्कृत साहित्यमें 'हिंदू' शब्द मिलता ही नहीं। किंतु संसार में कुछ ऐसे जनसमूह आगे चल कर निर्माण हुए जो संपूर्ण मानवजाति के साथ एकात्म होने के लिए तैयार नही थे। वे अपनी अलग पहचान रखना चाहते थे और उसे बाकी लोगों पर थोंपना चाहते थे। ऐसे जनसमूह जब भारत आये तब 'हम ऐसे जनसमूहोंसे अलग हैं' यह स्पष्ट करने के लिए अपनी पहचान देनेवाला शब्दप्रयोग हमें करना पडा, जो पहलेसे ही उपलब्ध था। पहले ही बाहर के लोगों ने कहा था कि ये 'सिंधू' लोग याने हिंदू लोग हैं। हिंदू शब्द पहले से उपलब्ध था। जैसे किसी भी शहर के मार्केट में जबतक केवल विशुद्ध घी आता है, तो एक फलक लगाना पर्याप्त होता है 'घी की दुकान'। किंतु जब घी के मार्केटमें वनस्पती घी आता है, तो विशुद्ध घी की दुकान पर बोर्ड लगाना पडता है 'विशुद्ध घी की दुकान'। वैसे पूर्व में हमारे मानदण्ड थे इसलिए 'हिंदू' नाम चाहे रखे या न रखें, Identified Human Society यही हमारी पहचान थी। किंतु जैसे ये 'वनस्पती घी वाले' हमारे मार्केटमें आ गये, तब हमको कहना पडा की हम 'हिंदू' हैं।

अन्यथा हिंदू और मानव एकरूप हैं। हमारी कुछ परंपरागत मान्यताएं है। हमारा अस्मिता-बोध (Absolute reference) सनातन धर्म है। इसका बहुत प्रभाव है। पंडित जवाहरलाल नेहरू जिन्होंने जीवन भर 'धर्म' शब्द की निंदा की, उनके मृत्यु के २४ घंटे पहले श्रीमन्नारायण अग्रवाल की किताब को उन्होंने प्रस्तावना लिखी और उसमें स्पष्ट कहा कि हमें क्या प्राप्त करना है। उन्होंने कहा कि, "हमे Industrial Production बढ़ाना है। Agricultural Production बढ़ाना है। किंतु उससे महत्त्वकी बात है To mould men's minds on the basis of Dharma!" तो धर्मका सभी लोगोंपर, माने न माने, इतना प्रभाव है।

और इसी सनातन धर्म का युगानुकूल आविष्कार पंडित दीनदयालजीने दिया हुआ आजका 'एकात्म मानव दर्शन' है। हमारे द्रष्टाओं ने जो दर्शन प्रस्तुत किया वे वैश्विक नियम ('युनिव्हर्सल लॉज') इसके आधारभूत हैं। वे शाश्वत है, स्थायी है, अपरिवर्तनीय है। उनके प्रकाशमे समय समय पर, अलग अलग कालखंडोमें, प्राप्त परिस्थितियों के आव्हानों को ध्यान रखकर समाजरचना में आवश्यक परिवर्तन करते रहना, यही हमारी पद्धती है। 'Ever changing socio-economical order in the light of the unchanging eternal universal Laws यही धर्म का स्वरूप है। इस तरह की युगानुकूल समाजरचना के विवरण को 'युगधर्म' यह संज्ञा है। यही आज का एकात्म मानवदर्शन है। जो समाजव्यवस्था सनातन धर्मके दायरे में रहेगी उस में अंतर्विरोध (Internal self Contradiction) कभी भी पैदा नही हो सकते।

जो समाजव्यवस्था सनातनधर्म के दायरेके बाहर रहेगी उसके अंदर अंतर्विरोध पैदा होना अपरिहार्य है। ऐसी समाजव्यवस्थाएं अपने ही अंतर्विरोध के बोझ के नीचे दबकर खत्म हो जाती है। इसी कारण कम्युनिज्म खत्म हो चुका है। और हम आपको आश्वासनपूर्वक कह सकते है कि कॅपिटालिज्म सन २०१० के पूर्व ही पूर्णरूप से खत्म हो जाएगा। परमपूजनीय श्रीगुरुजीका World mission of Hindus हमे बताता है कि जागतिकीकरण (Globlisation) का सही अर्थ क्या है। 'होलिस्टिक इन्टीग्रल वे ऑफ थिंकिंग' हमारी विशेषता है। 'कम्पार्टमेन्टल प्रॅगमेटरी थिंकिंग' आज तक पाश्चिम की विशेषता रही है। अब वे 'इन्टर-डिसीप्लिनेरी ॲप्रोच' की ओर आ रहे है, जो हमारे संपूर्ण चितन का तो आधार ही है। हमारे द्रष्टाओं के जिस साक्षात्कार को हमने Values of life के नाते स्वीकार किया वह है, ''सर्वं खलु इदं ब्रह्म''। जिसका सरल अंग्रेजी मे अनुवाद होता है, All is One! All are one नहीं। सभी का अंतिम गन्तव्य स्थान एक ही है सभी प्राणि योंका 'सुख'। घनीभूत सुख, चिरंतन सुख, निरंतर सुख। जिसको शास्त्रीय परिभाषा में 'मोक्ष' की संज्ञा दी गई है। वहां तक पहुचने के मार्ग अनेक है। इसे कहा जाता है स्यादवाद, जो अपने जैनपंथ नें विशेष रूपसे प्रस्तुत किया है। In the immediate Social context सुख का मतलब होता है 'सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु। सर्वभूते निरामयाः। इसकी प्रतिधारणा (करॉलरी) है - Happiness of the poorest of the poor, of the lowliest of low, सर्वोदय, अंत्योदय यही हमारी विकास की

धारणा है। विकास का 'वेस्टर्न पॅराडाईम' (Western paradigm) हिंदुविरोधी Anti Hindu है। पर्यावरणविरोधी (Anti Environment) है। हमारे यहां, धर्मविरोधी-एन्व्हायरॉनमेन्ट की चिंता वैदिक कालसे हुई है। १९७२ मे स्टॉकहोमके आंतरराष्ट्रीय पर्यावरण परिषद में श्रीमती इंदिरा गांधी ने जब कहा कि हमारे यहां एकॉलॉजी की चिन्ता वैदिक कालसे कर रहे है, सबको आश्चर्य हुआ। आप जानते हैं कि अथर्ववेद का १२ वा अध्याय ६३ श्लोकों का है जो पर्यावरण के सम्बन्ध में ही है।

विकास का हमारा मार्ग है, **चतुर्विध पुरुषार्थ**। क्यों कि हर एक व्यक्ति शरीर, मन, बुद्धी, आत्माका संपूर्ण सर्वांगीण विकास, समाज का भी सर्वांगीण अर्थात् भौतिक तथा आध्यात्मिक विकास। जो एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। वे एक दूसरे से अलिप्त (म्युच्युअली एक्स्ल्यूझीव्ह) नहीं है। यह हमारी हिंदू धारणा है। समुत्कर्ष और निःश्रेयस जो हमारी प्रार्थना में आता है, शब्द दो हैं। किन्तु 'समुत्कर्ष' एवं 'निश्रेयस' के सामने जो प्रत्यय आता है, वह 'स्य' एकवचनी षष्ठी है, द्विवचनी नही है।

हमारे इन विचारों को शिक्षित लोगों मे अधिकाधिक मान्यता प्राप्त होने लगी है। परिवर्तन (the turing Point) आ रहा है। विदेशियों द्वारा बुद्धिपुरस्सर प्रसारित गलत सिद्धान्तोंको (मिथ्स) नष्ट करने में सफल होने की प्रक्रिया चल रही है। उतने में अब नये गलत विचारों (मिथ्स) का भी आक्रमण होने लगा है।

११०० साल पराये आक्रमणकारी सत्ता का मुकाबला करते हुए हिंदू सैनिकी शक्ती ने अठारहवीं शताब्दी के मध्य मे यावनी वर्चस्व को निर्णायक रूपसे नष्ट करने में सफलता प्राप्त करने का बडा काम किया। अटक से कटक तक हमारे विजयी अश्व संचार करने लगे। यावनी आक्रमण का मुकाबला हमने कितने बहादुरी से किया, इस का चित्रदर्शी वर्णन सावरकरजी ने (मूलतः मराठी में) किया है-

ईरान से फिरंगणा तक दुष्मन ने धावा बोला।
सिंधू से सेतुबंध तक भूप्रदेश रण हो चला।
त्रिखंड की उस सेना को हम ने डुबोया।
सिंधु से सेतुबन्ध तक समर हम ने जीत लिया॥

[इराणपासुनी फिरंगणापर्यंत शत्रूची उठे फळी।
सिंधुपासुनी सेतुबंधपर्यंत रणांगण भू झाली।
तीन खंडीच्या कुंडाची ती परंतु सेना बुडवी।
सिंधु पासुनि सेतुबंधपर्यंत समर 'भू' लढविली॥]

किंतु यह यशस्विता की प्रक्रिया पूरी होने के पूर्व ही अचानक दुसरा प्रबल आक्रमण सामने आया, अंग्रेजों का। सैनिकी एवं राजनीती के क्षेत्र में यह जो प्रक्रिया हुई उसी की पुनरावृत्ती आज हमारे 'वैचारिक' क्षेत्र में भी हो रही है। पुराने मिथकों के खिलाफ हम यशस्विता से आगे बढ़ रहे हैं, उतने मे नये मिथकों का आक्रमण तेजी से प्रारंभ हुआ है। यहां ध्यानमे रखने योग्य विशेष बात है, ऐतिहासिक कालखण्ड में आक्रमण का ठीक जवाब देने हमें ग्यारह सौ साल मिले। किन्तु नये आक्रमण का स्वरूप भीषण है। वह हमें अधिक समय देने वाला नही। शीघ्रता से इसका प्रतिकार न किया तो एक दशक के अंदर अंदर यह आक्रमण हमारी स्वतंत्रता तथा संप्रभुता को खत्म कर देगा। देश में बेरोजगारों की संख्या करोडों हो जाएगी, स्वतंत्रता एवं संप्रभुता नष्ट हो जाएगी। इस गलत प्रचार-अभियान (न्यू मिथ्स) का प्रारम्भ जून १९४५ से ही हुआ और साम्राज्यवादी देशों को आंतरराष्ट्रीय परिस्थिती के दबाव के कारण उनके उपनिवेशों को स्वतंत्रता प्रदान करने बाध्य होना पड़ा। उनकी अपनी अर्थव्यवस्था का ढांचा बनाये रखना उनके लिए संभवनीय नही रहा। क्यों कि तब तक की उनकी समृद्धी उनके उपनिवेशों के शोषण के आधारपर ही खडी थी। उनकी अपनी अर्थव्यवस्था टूट न जाए, इसलिये उनके लिए आवश्यक और अपरिहार्य हो चुका था कि अन्य देशोंका शोषण करने का अवसर उन्हें फिर भी अखंड प्राप्त होता रहे।

किंतु यह कैसे संभव हो सकता था ? क्यों कि नवस्वतंत्र देशों के स्वाभिमानी देशभक्त यह कभी भी बरदाश्त नही कर सकते कि स्वाधीनता के पश्चात भी उनके देशोंका शोषण गोरे विदेशियोंके द्वारा चलता रहे और वे उन्हें आर्थिक गुलामी मे ढकलते रहें। इसलिए उनकी रणनीती इस तरह की तय हुई कि नवस्वतंत्र देशोंमें उन के लिए अनुकूल ऐसे ही लोग हुकूमत में आ जाए, इस दृष्टि से व्यवस्था करना। इसके लिए आवश्यकता होनेपर खून खराबा भी करना पडे तो करना। ऐसा अनुकूल शासन इस तरह का होना चाहिए कि जो गोरे साम्राज्यवादी देश यदि अपनी जनता का शोषण करेंगे तो भी उन

के साथ निःसंकोच बेशर्मी के साथ पूर्ण सहयोग करेगा। अपने देश के साथ गद्दारी करने में जिन को संकोच नही होगा। सारी जनता को आंतरराष्ट्रीय घटनाओं के बारें में पूर्णरूपेण अंधेरे मे रख कर उनके राज्यकर्ताओंके साथ समझौते करना, इन समझौतों का पूर्ण ब्यौरा प्रकाशित न करते हुए उनके 'मीठ मीठा गप गप' ऐसे ही समाचार प्रकाशित करना, और फिर समझौंतों का क्रियान्वयन करते समय जब वे जनविरोधी ढंग के कारण अखरने लगें तब लोग नाराज भले ही हो जाए, किंतु प्रतिकार करनेकी स्थिति में नही रहेंगे। (They will be perplexed not knowing what to do) आकाश में से एकदम कुल्हाडी गिर जाए तो आदमी जैसा भ्रमित होता है वैसी उनकी अवस्था होगी। ऐसे देशों के स्वाभिमानी राष्ट्रभक्त, विदेशी आर्थिक साम्राज्यके विरोधे में जनता को जागृत करनेके लिए कौन कौन से तर्क प्रचारित करेंगे, उसे पहले से ही ठीक ढंग से भांपकर ऐसे संभवनीय तर्कों को काटने के लिए इस तरह का मिथ्या प्रचार चालू करना जिसके धन एवं प्रचार से देशभक्तों के तर्क निष्प्रभ हो जाएंगे। इसलिए बहुत सारे झूठे तर्क पहलेसे प्रचारित किये गये।

यह इतिहास था की प्रचार का बहुत लाभ होता है। जैसे डॉ. गोबेल्सने कहा कि झूठ सौ बार कहिये, वहीं सच बन जायगा। (Repeat the lie hundred times and it becomes the TRUTH.) हिटलर ने एक कदम आगे जाकर कहा, झूठ बात का भी जबरदस्त पुलिंदा हो ताकि कोई सोच भी न सके कि वह ढकोसला होगा। (If you want to give a lie, do not give a simple lie. Give a big bluff, so big that nobody will be able to imagine that it is a bluff)

अब नए मिथक (Myths) अभी अभी आए हैं। World Bank, International Monetory Fund, World Trade Organisation Multinationals, America और अन्य जो गोरे देश हैं उनका प्रचार बहुत दिनों से चलने के कारण सभी लोगों के मनपर ही नही, हमारे भी मस्तिष्क पर उन का असर हुआ है। प्रचार का परिणाम होता है और यह बात कितनी गंभीर है यह न जानने के कारण 'थोडा बहुत फर्क पडेगा।' '१९-२० का फर्क होगा।' 'उससे क्या फर्क पडता है, बादमें देखेंगे।' ऐसे विचार कुछ अपने भी मन में आने लगे है। ऐसे लोग देशभक्त और सर्मपित होते हुए भी समझते नहीं हैं। (They do not know the magnitude of the problems.)

इसका मुझे अभी अभी अनुभव आया। हमारे दो अच्छे संघके पुराने कार्यकर्ता थे। हमारे साथ उन की बहस चलती थी कि आप टेक्नालाजी के बारे में ऐसी दकियानूसी नीति क्यों अपनाते हैं। हमने कहा की राष्ट्रीय टेक्नॉलॉजिकल नीति होनी चाहिए। वे बोले इतनी संकीर्णता क्यों ? टेक्नॉलॉजी जितनी आधुनिकतम रहेगी उतना देश आगे बढ़ेगा। अभी 'ऑर्गनायझर' में एक लेख छपा था। 'स्वदेशी एवं टेक्नॉलॉजी'। उसमे टेक्नॉलॉजी का विकास कैसे कैसे हुआ, कहाँ तक आया, उसके परिणाम क्या है आदि बताया। टेक्नॉलॉजी का विदेशी आदर्श क्या है यह बताया। बहुराष्ट्रीय भी यहा आएंगे तो उनका आदर्श यही रहेगा, 'ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमाना।' साऊथ कॅलिफोर्निया विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभागप्रमुख डॉ. बॅरन ने टेक्नॉलॉजी के विकास का आदर्श बताया। उन्होंने कहा कि हम टेक्नॉलॉजी को उस अवस्था तक ले जाना चाहते हैं जब बड़े से बड़ा कारखाना दो कर्मचारियों के भरोंसे हम चला सकेंगे, एक कुत्ता और एक आदमी। सारी मशिनरी तो मालिक साहब ने बटन दबाने के बाद चलती ही रहेगी। उसमे कोई शरारती आदमी आ कर बाधा न करें इसलिए एक अच्छा अल्सेशियन कुत्ता रखेंगे। और कुत्ते को दिन भर खिलाने-पिलाने के लिए एक आदमी रखेंगे। इन दो कर्मचारियों के भरोंसे हम बडे से बडा कारखाना चलायेंगे। यह इनका आदर्श हो रहा है।

अभी युरोपियन कम्युनिटीने कमिटी बिठायी, छह छोटे देश इटली, जर्मनी, फ्रान्स, बेल्जम आदि पर टेक्नॉलॉजीका क्या असर हुआ, यह देखनेके लिए। वहां भी अत्याधुनिक टेक्नॉलॉजीके कारण लाखो लोग बेरोजगार हुए। अमेरिकन काँग्रेस की हाउस कमिटी के अध्यक्ष जॉर्ज इ. ब्राऊन ने प्रकट रूपसे वक्तव्य दिया कि अमेरिका में बेकारी बहुत बढ़ने का प्रमुख कारण टेक्नॉलॉजी है। 'American Federation Of Labour' टेक्नॉलॉजीका विरोध कर रही है। जब हम अमेरिका का नाम लेते है तो कृपा कर के ऐसा मत समझें की हम सभी अमेरिकनों के खिलाफ हैं। साधारण अमेरिकन नागरिक हमारे जैसा भोला और अज्ञानी है। हम जब अमेरिका का नाम लेते है तो वहां जो पूंजीवादी और शासकोंकी सांठगाठ है, उसकी हम आलोचना कर रहे है। (The Nexus between the rulers and the veiled intersts, of United States)। आप अंदाज नहीं कर सकते कि ये लोग कैसे हैं। आप सज्जन हैं इस लिए आप कल्पना नहीं कर सकते। उन्होंने देखा कि छोटे-बडे देशोंका शोषण करने मे समय लग रहा है, धीरे धीरे वहाँ के लोग जागृत हो रहे हैं, प्रतिकार कर

रहे हैं। युरप के लोग भी अब पहले समान उनके बिलकुल बगलबच्चे बनने से इन्कार कर रहे हैं। जिन चीन और जपानकी हालत ऐतिहासिक घटनाक्रम के कारण ऐसी बनी थी कि दुम दबाकर भागते थे, आज बराबरी के नाते खडे हो रहे हैं।

फिर एक नया अनुभव भी उन्हें आया। वे जानते हैं कि तृतीय विश्व के देशों मे मजदूरोंको पैसा कम देना पडता है। कच्चा माल सस्ते में मिलता है। किंतु वहाँ का उत्पादन उतना दर्जेदार नही होता जितना अमेरिका का। फिर भी पाच-छः जगह उन्हें ऐसा भी अनुभव आया कि कम वेतन लेनेवाले मजदूरोंने भी उतनी ही उत्पादनक्षमता एवं स्तर दिया। तो इनके मन में लालच पैदा हुई। अमेरिकन पूंजी से जो नए उद्योग लगायेंगे क्यों न वे तृतीय विश्व के देशों मे शुरु किए जाए? सस्ता कच्चा माल, और सस्ता मजदूर। इसके कारण लाभ की मात्रा बहुत बढ जाएगी। तो अमेरिकन पूंजीनिवेश, अमेरिका मे न करते हुए विदेशों मे करने की उन्होने सोची, किन्तु इसके कारण उनके अपने देशवासी बंधू (Flesh of their Flesh and Blood of their Blood-KITH & KIN) भी कितने बेरोजगार रह जाएंगे इस की भी उन्हों ने चिन्ता नहीं की। अमेरिका के जो उद्योग बीमार हो जाते है, उन्हे सहायता देने के बदले अमरीकी सरकारने भी सोचा कि बीमार उद्योगोंकी सहायता के लिए बहुत जादा डॉलर देने पडेंगे तो क्यों न ये सारे उद्योग उठाकर तृतीय विश्वमें ले जाए? वहाँ उत्पादन होगा, लाभ की मात्रा ज्यादा रहेगी और ये उद्योग चलने लगेंगे। मुमकिन है उन उद्योगों में काम करनेवाले उनके जो सगे अमरीकी नागरिक हैं वे सारे इस से भूखे मर जाएंगे, किन्तु इसकी उन्होंने फिक्र नहीं की!

मेरे कहने का मतलब है की उनकी इस मानसिकता की आप सज्जन लोग कल्पना भी नही कर सकते। हमारी सज्जनता हमारी एक दुर्बलता है। हम जिन दुष्ट लोगों के संपर्क में आते है, वे इतने हैवान हैं कि उनको किसी भी प्राणीमात्र के बारेमें प्रेम नहीं है। दया नहीं है। करुणा नहीं है। जो अपने ही देशवासियों को भी भूखमरी में डाल सकते हैं वे आपकी फिक्र क्या करेंगे? ऐसा यह बहुत बडा आव्हान है।

किंतु अपने यहाँ उस के विषय में जानबूझकर लोगोंको अंधेरेमे रखा गया। और उनके इस गलत प्रचार का ऐसा कुछ विचित्र परिणाम हुआ है की इसके कारण अपने भी कुछ लोगों का सोचना है की अरे भाई, फर्क

कितना पडेगा ? '१९-२० का ही फर्क पडेगा।' किन्तु यह १९-२० का नही, +१०० और -१०० इतना अन्तर है।- **बहुत फर्क पडता है। देश बरबाद होगा। हमारे उद्योग उनके हाथ में जाएंगे। कृषी उनके हाथ में जाएगी। शोधकार्य उनके हाथ में जाएगा। हमारी संप्रभुता खत्म हो जाएगी। हमने पहला स्वतंत्रता संग्राम १९४७ मे जीत लिया, उस मे राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त की।** अभी यह second war of Independence हमको लड़ना पडेगी, जो आर्थिक स्वतंत्रता की लड़ाई है। पहली लड़ाई एक तरफ अंग्रेज सरकार और एक तरफ भारतवासी, ऐसी थी। आज की लड़ाई केवल दो पक्षों में सीमित नहीं है। तीसरा विश्वयुद्ध चल रहा है। प्रारंभ हो चुका है। पहिले दो विश्वयुद्ध सैनिकी शस्त्रों से लड़े गये थे। यह तीसरा विश्वयुद्ध आर्थिक शस्त्रों से लड़ा जा रहा है। इस तीसरे विश्वयुद्धके अंतर्गत भारत का दूसरा स्वतंत्रता संग्राम यहाँ तेजी के साथ लड़ने की आवश्यकता है। उसकी तयारी करने की आवश्यकता है। अच्छे अच्छे हमारे राष्ट्रभक्त, राष्ट्रसमर्पित लोग भी उनके गलत प्रचार के शिकार हो कर और भीषणता को (Magnitude of the problem) न समझने के कारण कभी कभी स्वदेशी के बारे में गलत सोचते है। उन्हों ने यह सारा समझने का प्रयास करना चाहिये। ये जो नए मिथक हैं इन का भी जनता में प्रचार करने की आवश्यकता है। इसका विरोध जो होगा वह जागृत जनता के द्वारा ही होगा।

वैसे तो मैं आप को बताना चाहता हूँ कि हमारी स्वतंत्रता बैची गई है। जिस समय पूर्व काँग्रेस सरकारने गॅट के करारनामे पर हस्ताक्षर किए और World Trade Organisaation की सदस्यता स्वीकार कर ली, तभी हम बेचे गये हैं। उन के सामने एक चेतावनी थी। कॅनडा के सत्ताधारी पक्ष ने ऐसेही एक समझौंते पर हस्ताक्षर किया था जिसे North American Free Trade Agreement (NAFTA) कहा जाता है। जब वह समझौता कॅनडा के लोगों के सामने आया तो 'मीठा मीठा गप' के रूप मे आया, तो उन्होंने सोचा ठीक है, इसमे आपत्ती क्या है। पूर्ण सच्चाई सामने आयी नही थी। किन्तु जब क्रियान्वयन शुरू हुआ तब पता चला कि यह तो घातक है। उसके खिलाफ असंतोष और आंदोलन शुरू हुआ। सत्ताधारी दल के दुर्भाग्यसे उसी समय आम चुनाव निकट आया। लोग इस बात पर नाराज थे, और जिस सत्तारूढ पक्ष ने समझौते पर हस्ताक्षर किये थे वह चुनाव में धुल गया। उन को संसद मे मात्र दो स्थान मिले। विरोधी दलका शासन आया। विरोधी दल के प्रधानमंत्रीने

पहला पत्र राष्ट्रपती क्लिन्टन को लिखा - 'हम जानते हैं कि पूर्व शासन के द्वारा किये हुए इकरारोंका पालन करना नयी सरकार की जिम्मेदारी मानने का संकेत होता है, किन्तु जो ॲग्रीमेन्ट है वह स्पष्ट रूपसे इतना यह अन्यायपूर्ण एवं अनुचित है कि मैं इस समझौते पर दुबारा वार्तालाप की मांग करता हूँ।' मैं समझता हूँ कि दुनियाके इतिहास मे यह पहला ही अवसर है जब किसी प्रधानमंत्री ने यह भूमिका ली हों।

अपने देश में भी चुनाव आ रहे थे इस के कारण ऐसी कोई बात अनौपचारिक रूप से तय हुई थी कि 'भाई हमने हस्ताक्षर तो किया है, सब कुछ अमल में लाया जायेगा। किन्तु आप जल्दी मत कीजिए। क्रियान्वयनकी बात तेजीसे मत कीजिए। तेजी से क्रियान्वय करेंगे। तो हमारा भंडाफोड होगा और चुनावमें हमारी वही हालत होगी जो कॅनडा के सत्तारूढ पार्टीकी हुई। तो जरा सबूरी से लेना। चुनाव तक सबूरी से लेना। हम फिरसे सत्ता मे आ जायेंगे तो सारा क्रियान्वयन समझौते के अनुसार हम करेंगे। फिर कोई हमारा कुछ बिगाड नहीं सकता।' यह म्युच्युअल अंडरस्टँडिंग थी। अब चुनाव में नतीजे विपरीत ही आये।उसके बाद क्या हुआ, आप जानते हैं। हस्ताक्षर करने वालों की सरकार नहीं बनी है। अब इस नयी परिस्थिती में क्या होगा ? किंतु तय बात है कि ॲग्रीमेन्ट पर हस्ताक्षर हुए है। Our country is already sold! हस्ताक्षर करनेवाला जो शासन था, वह अब सत्ता मे नही है। किन्तु दूसरी भी बात है। जगह जगह देखा गया है। Hands of Foreign capital are too long कौन कौन खरीदे नहीं जायेंगे, इसकी सूची करना बहुत कठिन है। सारे स्कॅम्स, सारे घोटाले, आप पढ रहे। People are purchased. Leaders are purchased. यह स्पष्ट बात है।

ऐसी परिस्थिती में हम खडे हैं। और इसमें से रास्ता निकालना है। वह जनजागरण के भरोंसे ही निकालना है। सभी देशभक्त लोग एक मंचपर आ कर इसका विरोध करेंगे तभी इसका मुकाबला हो सकेगा। इस परिस्थिती में हम है। जो पुराने मिथ्स थे उनका मैं ने केवल निर्देश किया। नये मिथकों का उल्लेख नहीं किया क्यों कि इसका सारा प्रचार स्वदेशी जागरण मंच से चल रहा है, उसका पुनरुच्चारण आवश्यक नहीं, किंतु इस परिस्थिती में हम खड़े हैं। बाकी जो राजनीतिक क्षेत्र में चल रहा उसमे भी भारी गडबड है, वह सब लोग जानते है। राजनीति क्षेत्र में उथलपुथल चल रही है।

अब इस परिस्थिती मे स्वाभाविक विचार आता है की इतने जो आव्हान

हैं, क्या उनपर कोई उपाय है? बीमारी बता दी, किन्तु इलाज क्या है? वैसे तो इंग्रजी कहावत है - रोग का सही निदान हो गया तो समजना आधी बिमारी अच्छी हो गयी correct diagnosis is half-cure! फिर भी इलाज भी तय करना होगा।

अब स्वाधीनता के पश्चात हमारे देशमें संविधान आया। जब भी संविधान की चर्चा करते हैं तो हमारे ही कुछ लोग इसका गलत अर्थ लगाते है कि यह डॉक्टर आंबेडकरजी के खिलाफ बोलते है। ऐसा नहीं है। डॉ. आंबेडकरजी ने स्पष्ट रूपसे कहा है कि 'मैं ने संविधान का तर्जुमा बनाया। किन्तु सब कुछ मेरे मन के मुताबिक था ऐसा नही है। I had to accomodate all the various currents in the Constituent Assembly. मैं ने जिस उद्देश्य से संविधान बनाया, उन उद्देश्योंकी पूर्ती नहीं होती ऐसा यदि मुझे दिखायी दिया, तो I will be the first man to burn the copy of the Consitution on public square! यहाँ तक डॉ. आंबेडकरने कहा है। तो संविधान के बारे में बोलना यह कोई उनके बारे में बेइज्जती की बात नहीं है। हम उनका बडा सन्मान करते है।

संक्षेप में कहना होगा तो यह British-type Constitution हमारे लिये सहीं नहीं होगी। जिनकी कोई निजी स्वार्थ साध ने की दृष्टि नहीं थी, वे पहले से चेतावनी रहे थे। १९०८ में पूज्य महात्मा गांधीजी नें 'हिंद स्वराज्य में कहा था ये ब्रिटिश पार्लमेंटरी सिस्टिम हमारे लिए योग्य नहीं है। १९१४ मे योगी अरविंद ने कहा कि हमारे देशमें एकही सिस्टिम काम कर सकती है वह है 'Govt of Interests'! कार्यक्षेत्रों के अनुसार प्रतिनिधित्व (Functional representation) की जो बात बादमें आयी है, वही है Govt. of Interests! १९२६ में जब चक्रवर्ती राजगोपालाचारी जी जेल में थे उन्होंने आत्मकथा लिखी, उसमे उन्होंने स्पष्ट लिखा की यह majority-minority वाली डेमोक्रेसी हिंदुस्थान में आती है, तो चुनाव के समय भारी भ्रष्टाचार होगा और वह भ्रष्टाचार केवल चुनाव के समय तक सिमित न रह कर बहुत फैलेगा। १९२६ में उन्होंने यह लिखा। स्वराज्यप्राप्ती के थोडे दिन पहले मानवेंद्रनाथ रॉय ने – जिन्होंने दुनिया भर के संविधानों का अध्ययन किया – कहा कि यह ब्रिटिश पार्लमेंटरी पद्धति उसी देशके लिए उपयुक्त है जहाँ लोकप्रबोधन पर्याप्त हो। जहाँ वह पर्याप्त नही है, वहाँ यह काम नहीं कर सकती। उनके किसी शिष्य ने पूछा कि, 'करोडो लोगोंका देश है, इनको साक्षर बनाना, सुशिक्षित बनाना, फिर

वे देश का कारोबार देखेंगे, इसे कितना समय लगेगा? **क्यों कि लोकतंत्रका मतलब होता है शासन की निर्णय प्रक्रिया में हर नागरिक का सहभाग होना। मात्र मतदान करना यही लोकतंत्र का मतलब नहीं है। और इसके लिए शिक्षा की आवश्यकता है।** करोडो लोगोंके सुशिक्षित करने में कितना समय लगेगा?' उनका उत्तर बडा अच्छा था जिस का हम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में भी प्रयोग करते हैं, 'It may be the longest way, but if it is the 'only' way, then it becomes the shortest way!'

आज लोकप्रबोधन की स्थिती क्या है? हम जानते है. जब संविधान की रचना हुई तो 'फेडरल' और 'युनायटेड' की चर्चा हुई। उस समय परमपूज्य श्रीगुरुजी ने कहा था कि 'फेडरल स्ट्रक्चर' नहीं होना चाहिये। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने भी कहा, 'यह फेडरल स्ट्रक्चर नहीं है। 'Indian Union' इस शब्द का प्रयोग मैं जानबूझकर किया है ता कि आनेवाली पीढियों मे गलतफहमी न हो कि यह कोई फेडरेशन है।' आंबेडकरजी ने यह स्पष्ट कहा था। उस के पश्चात जब संविधान - समिती का काम चला तो प्रस्तावित संविधान की त्रुटियों के बारे में डॉ. सच्चिदानंद सिन्हा, डॉ. राजेंद्रप्रसाद, स्वयं डॉ. आंबेडकर, सभी ने जगह जगह पर अपना असंतोष प्रगट किया था। फिर लोकनायक जयप्रकाश नारायण, विनोबाजी भावे, एम. एन. रॉय आदि ने यह प्रश्न खडा किया कि क्या राजनीतिक पार्टियों की पद्धती जनतंत्र के लिए अनुकूल है? एम्. एन्. रॉय की जो पुस्तक है, 'Party, Power and Politics' उसमे यह चर्चा है कि क्या राजनीतिक पक्ष लोकतंत्र का माध्यम बन सकते है? यही चर्चा जयप्रकाश नारायण ने अपने प्रजासमाजवादी पक्ष से त्यागपत्र के समय की थी। उन्होंने कहाँ कि 'मुझे लगता है, राजनीतिक पक्ष प्रजातंत्र की भूमिका नही निभा सकता, पक्ष के अंतर्गत भी लोकतंत्र आवश्यक है।'

परमपूज्य श्रीगुरुजी ने थाना में कुछ सुझाव दिए थे। उन्होंने कहा था, 'This Constitution can not be the product of the soil!' एकदम बदलना भी नही, किंतु दो बाते कही थीं। एक तो कहा कि 'territorial representation के साथ साथ Functinal Representation भी होना चाहिये। मतलब ऐसा नहीं है कि क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व की रचना पूर्ण रूपसे रद्द करके उसकी जगह कार्यगुटों के अनुसार ही प्रतिनिधित्व रखा जाए। किन्तु आज जो पार्लमेन्ट की और असेंब्ली की रचना है उसी में क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व के साथ साथ कार्यगुटों का प्रतिनिधित्व भी लाया जाए। इस हेतु कैसी व्यवस्था करना यह

सार्वमत से तय हो सकता है। दूसरी बात उन्होंने कही कि सबसे छोटी इकाई में चुनाव निर्विरोध ही होना चाहिए। (Unanimous eletion at the lowest unit)'

जब मै थाना से दिल्ली लौटा, तब अपने एक साम्यवादी सांसद मित्र से मैं ने यह निर्विरोध चयन की बात बतायी। तो उन्होंने कहा 'नॉन-सेंसिकल!' यही 'प्रोग्रेसिव्ह' लोगोंकी भाषा होती है। मैने इतना ही कहा, 'आपका कहना सच हो सकता है। आप भी अनुभवी है, किंतु एक ही बात मुझे स्मरण हो रही है। मोहंमद साहब के जीवन में उन को ईश्वरीय अनुभूति (रिव्हीलिएशन) उम्र ४० की अवस्था में हुई। उसके बाद उन्होंने प्रचारकार्य शुरू किया। उनके जीवन के अंतिम चरण में अरब क्षेत्र में इस्लाम चारों और फैल गया था। वे बूढे हो चले थे। मक्का से बहुत दूर एक गाँवमें उन के शिष्यों में विवाद खडा हुआ। एक गुट के प्रतिनिधी मक्का आए, मोहंमद साहब से मिलने। उन्होंने विवाद बताया और कहा कि 'साहब आप हमारे गाँव चलिये क्योंकि अपने ही पंथ में गुट बने है।' मोहंमद साहब ने कहा 'एक तो मेरी उमर बडी है, यातायात के साधन कम हैं। जहाँ विद्वान लोग साथ बैठते है, वहाँ मतभेद हो ही सकते हैं। इस्लाम इतना दूर दूर तक फैला है कि जहाँ-जहाँ मतभेद हो वहाँ-वहाँ मैं जा कर हल ढूँढता रहूँ तो यह शारीरिक दृष्टि से भी असम्भव सा है। मैं नही आता।'

शिष्यों ने पूछा, फिर निर्णय कैसे होगा? मोहंमद साहब बोले, 'आप सब गाँववाले इकठ्ठे बैठ कर एक अमीर को एकमत से चुने। अमीर याने नेता या अध्यक्ष। एकमत से अमीर का चयन करें, और उसका जो फैसला होगा वही मेरा फैसला माना जाए।' उन लोगों ने कहा, 'साहब यही तो गडबड है। जहाँ दो गुट है वहाँ एकमत से चुनाव कैसे हो सकता है? तो आप कम से कम अमीर की योग्यता के निकष तो बताइये।'

उस पर मोहंमदसाहब ने कहा, 'जिस व्यक्ति को अमीर होने की बिल्कुल इच्छा नहीं है, उसी को अमीर बनाइये। जिस व्यक्ति को अमीर बनने की जरा भी इच्छा हो वह कितना भी सक्षम क्यों न हो, उसे बिल्कुल अमीर नहीं बनाना।'

इसपर हमारे कम्युनिस्ट सांसद ने कहा, 'हाँ! There is some grain of truth in it!' हम ने कहा, 'मोहम्मद साहब ने बोला तो grain of truth मालूम होता है, एम. एस. गोलवलकर साहब ने बोला तो 'नॉन सेन्सिकल'

हो जाता है? तथाकथित प्रगतीशील अतिवादी अर्थात् गैरजिम्मेदार लोगों की यही परिपाटी होती है।

लेकिन इतने से भी समाधान होनेवाला नहीं था। वर्तमान संविधान चलता रहे, उसमे हम कुछ सुझाव दें, थोडे संशोधन हों, लेकिन यह पर्याप्त नही। थाना के बैठक के कई वर्ष पूर्व ही पंडित दीनदयालजी से श्रीगुरुजीने कहा था कि भाई राष्ट्रहित के परिपूर्ण दृष्टिकोण के आधारपर इस संविधान का अपना विकल्प भी हम लोगों ने पेश करना चाहिये। अतः दीनदयालजीने सघन चिन्तन, मनन के साथ एकात्म शासनप्रणाली का सूत्रपात किया।

'एकात्म' शब्द की व्याख्या करते समय मैं वहाँ था। बडी कठिनाई है। वास्तव में एकात्म का अनुवाद अंग्रेजी में intergral होता है। एकात्म मानवता याने integral humanism ।किंतु प्रचलित दुनिया के राजनितिक क्षेत्र में दो ही शब्द प्रचलित थे - 'युनिटरी' और 'फेडरल'। यह Integral शब्द लोगों को समझता नही, जँचता नही। इसलिये साधारण जनता की समझदारी के स्तर के अनुसार शब्द रखना पडा -'युनिटरी'। अभी अभी कुछ राजनैतिक दलों ने कहा है कि पहले हमने भाषावार राज्यरचना का समर्थन किया, किन्तु अब हमें लगता है कि राज्य छोटे होने चाहिये। यदि वे 'एकात्म शासन प्रणाली' को देखते तो उन्हें पता चलता कि आज जो कठिनाईयाँ आ रहीं है उन्हें दीनदयालजीने पहले ही भांप लिया था, इसलिये उन्होंने कहा था कि मूलतः छोटी इकाई Basic unit समान स्थानीय विशिष्टताओंके आधारपर होनी चाहिये। (Region with common local characteristics) ।भाषा एक पहलू हो सकता है, किन्तु एकमात्र नहीं। उन्होंने कहा कि पारम्पारिक रूप सें हमारे यहाँ ५५ से ६० तक ऐसे युनिट मानकर हम चले थे शायद अभी भी हम छाँट सकते है।, उन्होंने छाँटना शुरू किया था। अब ये common local characteristic याने महाराष्ट्र मैं जैसे आजएक विदर्भ है, कोंकण है, मराठवाडा है, जिनकी common characteristics है। गुजराथ मे दक्षिण गुजरात, उत्तर गुजराथ है। आंध्र मे भी है। common local characteristic वाले ये 'जनपद' है। दीनदयाल जी के पश्चात जहाँ जहाँ झगडे खडे हुए वहां आप यही भाव देखेंगे, कारण तो स्पष्ट है कि बड़े राज्य की सरकारें अपने छोटे विभागों के लिए सतर्क नहीं रहतीं इसलिए वहाँ असंतोष रहता है।

लेकिन जहाँ-वहाँ झगडे खडे हुए, मै निश्चय के साथ कह सकता हूँ कि वे सभी क्षेत्र पंडित दीनदयालजीकी धारणा के अनुसार जनपद ही थे।

खलिस्तान, नागालँड, मिझोराम, वनांचल, झारखंड, विदर्भ, तेलंगणा आदि जहाँ-जहाँ आज झगडे खडे हुए हैं वे जनपद ही हैं। किन्तु दीनदयालजी के पश्चात् इस बातपर आवश्यक ध्यान नहीं दिया गया। इस प्रकार की वैकल्पिक व्यवस्था की बात श्रीगुरुजी के मस्तिष्क में थी।

अब अपने सामने इस पर गम्भीर समस्याएँ है। ऐसा लगता है कि सारी अस्थिरता है। हमारे यहाँ सर्वश्रेष्ठ अधिकार (सुप्रीम ॲथॉरिटी) धर्म का रहा है, राजा का नहीं। राजदण्ड, धर्मदण्ड के अंतर्गत है। पश्चिम में सर्वोच्च अधिकार राजसत्ता का है। पश्चिम से हमारे यहाँ एक दूसरी भ्रांती आयी है (another myth) पश्चिम के अनुसार राजसत्ता सर्वोच्च है, इसलिये राजसत्ता हरएक बात कर सकती है। अतः हम कुछ मी गडबड करके सत्ता में आ जायेंगे - एक बार सत्ता प्राप्त करने पर सबकुछ ठीक कर देंगे। अर्थात् 'राजसत्ता सबकुछ कर सकती है' यह भ्रांती हमारे देश में भी आयी। यह नहीं समझते कि साधन-शुचिता के अभाव में, गलत साधनों का प्रयोग करके यदि हम सत्ता प्राप्त करते हैं तो उसके द्वारा हम सही ध्येय प्राप्त नहीं कर सकेंगे। यह सोचने के लिए धीरज (पेशन्स) की आवश्यकता है। आजकल सभी लोग बहुत जल्दी में हैं, कहाँ जाने की जल्दी में हैं पता नही। यही है राजसत्ता के विषय में एक भ्रांति।

जहाँ राजसत्ता को सर्वश्रेष्ठ माना गया था वहाँ भी अब एक नयी चर्चा शुरु हो गयी है। हमारे देश में वह चर्चा प्रारम्भ होने में ५ साल लगेंगे। अभीतक वामपंथीय एवं दक्षिणपथियों में चर्चा थी कि शासन क्या करे और क्या न करे। साम्यवादी कहते थे कि शासन सबकुछ अपने अधिकार में करे। पूंजीवादियों का कहना था कि शासन कम से कम विषय अपने हाथ में रखें। किन्तु ऐसा विवाद करनेवाले दोनों पक्ष मानते थे कि शासन सबकुछ करने की क्षमता रखता है। अब आज नयी चर्चा शुरु हुई है कि, शासन क्या कर सकता है और क्या कर ही नहीं सकता। सब कुछ बातें शासन करें ऐसा सोचने पर भी, क्या वह सम्भव है? कई कारणों से हरेक काम सम्पन्न करने की क्षमता शासन में होती ही नही। यह बात अब प्रकाशमें आने लगी है।

व्यवस्थापन शास्त्र के सर्वश्रेष्ठ प्रवक्ता पीटर ड्रकर ने ही यह विवाद वहाँ छेडा है, और इसपर वहाँ चर्चा चल रही है। हमारे देश में अभी भी ५ वर्ष पुराना पश्चिमी प्रभाव है कि राजसत्ता हथियाने पर हम सबकुछ कर सकेंगे।

दूसरी बात चुनाव में एकमात्र हिंदुत्ववादी दल होने के कारण संघ ने

भाजप का समर्थन किया। किंतु राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य के बारे में एवं राजनैतिक पक्ष के कार्य के स्वरूप के विषय में पहले से स्पष्ट धारणाएं थी। राष्ट्रनीति, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और राजनीती के पारस्परिक संबंधों के विषय में मै इतना ही कहूँगा की परमपूज्य श्रीगुरुजीके कुछ भाषण 'ध्येय दर्शन, पुस्तिका में ग्रथित हुए हैं, वह पुस्तिका आप पढेंगे तो राष्ट्रनीति, संघ और राजनीति के संबंधों का विश्लेषण आपके ध्यानमें आयेगा।

संघ की धारणा है कि 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ संपूर्ण हिंदू समाज का दर्शन है।' धारणा के धरातल पर संघ एवं समाज का सह अस्तित्व है; मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संघ सारे समाज के साथ एकरूपता की भूमिका रखता है। वह कोई गुट, पार्टी या राज्य नहीं है, समाज का अंश या हिस्सा मात्र नहीं है। समाज के अन्दर अलग इकाई बनाने की संघ की धारणा नही है। सम्पूर्ण हिंदू समाज को संगठित रूप प्रदान करने की संघ की मन्शा है। (Psychologically, Sangh is identified with the entire society. Sangh is not a part of the society. Sangh does not want to create the organisation within the society. Sangh wants to build the entire Hindu society and make it as an organised state of affair.) यही प्रमुख भूमिका है। इसी के अनुसार पहले से काम चला है।

फिर भी राजनैतिक मुद्दोंका, क्षेत्रोंका कुछ महत्त्व होता है और उसके कारण खतरा जब बढता है तब राष्ट्रहित के नाते चिंता करनी पडती है। परमपूज्य डॉक्टरजीके जीवनकाल में भी ऐसा एक प्रसंग आया कि हमारी मूल भूमिका व्यापक होते हुए भी संघ सम्पूर्ण समाज का दर्शन है, राजनैतिक क्षेत्र के बारे में सोचने की आवश्यकता पडी। वह था रॅम्से मॅकडोनाल्ड ने 'Govt. of India Act, 1935' के अंतर्गत जब कम्यूनल अॅवॉर्ड दिया। गांधीजी और काँग्रेस की स्थिति बडी पेचीदा हो गयी। वह अॅवॉर्ड स्पष्ट रूप से राष्ट्रविरोधी (anti-national) होने से उसका स्वीकार करना संभव नहीं था। किन्तु उसको नकारने पर तो मुसलमान नाराज हो जायेंगे, इसलिए काँग्रेस ने चुनाव के समय यह नीति अपनायी कि कम्यूनल अॅवॉर्ड के बारे में मौन रखना। (We neither accept, nor reject.) डॉक्टरजी उनसे कहते थे, "neither accept nor reject" का क्या मतलब है? तुम्हारे मकान मे चोर घुस आया है, हम पूछते हैं कि आपकी नीती क्या है, तो आप उसका स्वागत भी नहीं करते, और उसको बाहर भी नहीं निकाल सकते?"

इस स्थिति में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघके स्वयंसेवक राष्ट्रवादी होने के कारण, उस समय जो कम्यूनल अवार्ड का विरोध करनेवाली काँग्रेस नॅशनलिस्ट पार्टी और हिंदूमहासभा थी उनका काम स्वयंसेवकों ने व्यक्तिगत तौर पर किन्तु खुलेआम किया। संघ द्वारा अपने नाम से कोई वस्तव्य नहीं दिया गया किंतु खुले आम स्वयंसेवकों ने काम किया।

किंतु उसके पश्चात् स्वयंसेवकों का काम देखकर वे नेता लोग खुश हो गये। उनको लगा कि ये व्हालेंटियर अच्छे हैं। उन्होंने स्वयंसेवकों से कहना शुरू किया कि आप हमारे व्हालेंटियर बन जाइये। आपको समझता-बूझता कुछ है नहीं, हम नेता है, हम आपको काम बतायेंगे, आप हमारे मार्गदर्शन में चले। तो संघ के स्वयंसेवकों ने कहाँ कि हम यह मानने के लिए तैयार नहीं। हमारा संगठन राजनैतिक दल के अंतर्गत संबद्ध नहीं रह सकता। एक विशेष परिस्थिती में विशेष मुद्दे को लेकर हमने सहयोग किया है, किंतु 'संघ याने संपूर्ण हिंदू समाज' यही हमारी भूमिका रहेगी।

जनसंघ की स्थापना होने के बाद पहले चुनाव के संबंध में परमपूज्य श्रीगुरुजी का मतदाताओं को मार्गदर्शन करने हेतु जो वक्तव्य प्रकाशित हुआ वह पठनीय है। वैसे ही पिछले चुनाव के पूर्व सरकार्यवाह माननीय शेषाद्रीजीने एक परिपत्रक जारी किया था। उसकी भूमिका, श्रीगुरुजी की भूमिका, और डॉक्टरजी के समय की भूमिका समान है। इसमें से स्पष्ट होता है की संघ राष्ट्रनीतिमें है, राजनिति में नहीं है; किन्तु जब राजनीति का रुख राष्ट्रनीती में बाधा डालनेवाला हो जाता है, तब मजबूरीसे तात्कालिक कार्य हमारे स्वयंसेवक करते है। इस 'लक्ष्मणरेखा' को समझना चाहिए।

एक बिन्दू पर और सोचना आवश्यक है। आज की परिस्थिती का मूल्यांकन क्या है? हिंदू समाजरचना जब कभी आयेगी, उसको लाने में समय लगेगा। आज जो समस्याएँ निकट है, वे क्या हैं, यह खोजना चाहिये। कई लोग सोचते हैं कि 'हमने अपने धरातल के अनुकूल (product of the soil) संविधान नही बनाया, इंग्लंड की नकल उतारी है। लेकिन इंग्लंडकी नकल हम पूर्ण रूप से नहीं कर सकते। लोगोंके खयाल में नहीं आता कि यह असम्भव है। लोग ऊपरी तौर पर देखते हैं। कहते हैं कि जैसी रचना इंग्लंड में है, वैसी ही हमारे यहाँ बनायी है। इंग्लंड में प्रौढ मताधिकार है, हमारे यहाँ भी है। इंग्लंड में सभी महिलाओं को मतदान का अधिकार है, हमारे यहाँ भी है। वहाँ लोकसभा है, हमारे यहाँ भी है। सांसदीय कार्यपद्धति जैसी वहाँ है

वैसी यहाँ भी है। किन्तु इंग्लंड मैं जैसे परिणाम मिलते है, वैसे हमारे यहाँ क्यों नहीं मिलते ? वैसे इंग्लंड के लोग भी नहीं मानते कि उनकी रचना सर्वोत्तम है। उनकी केवल इतनी ही मान्यता है, कि उस में त्रुटियाँ अत्यल्प है।

किन्तु क्या कभी सोचा है कि वहाँ जो सारी रचना बनी वह किस ऐतिहासिक घटनकाक्रम में से (historical course of events) आयी और हमारे यहाँ जो रचना यकायक बनायी गयी वह किस घटनाक्रम के फलस्वरूप आयी है ? इंग्लंड के इतिहास में राजा (मोनार्क) सर्वश्रेष्ठ था। उसके खिलाफ अपने अपने अधिकारों के बारेमें लोग असंतोष प्रकट करते थे, किन्तु राजा सर्वशक्तिमान था। फिर जो विविध हितों के गुट (Interest groups) थोडे जागृत हुए उन्होंने थोडा प्रभाव डालना प्रारम्भ कर दिया। 'पार्लियामेंट' शब्द प्रचलित नहीं था, किन्तु संस्था के रूपमें 'किंग्ज कौन्सिल' ११ वी शताब्दी में हेन्री (प्रथम) ने बनाया, जिसे हम संस्था के नाते पार्लियामेंट का सूत्रपात कह सकते है। पार्लियामेंट यह शब्द १३ वी शताब्दी में आया। १२१५ में एक ऐतिहासिक घटना वहाँ हुई जिसे कहते है 'मॅग्ना चार्टा।' किंग जॉन ने 'मॅग्ना चार्टा' पर हस्ताक्षर किए और किंग्ज कौन्सिल में सदस्यों की संख्या बढायी। अन्यान्य हितों के गुट सामने आये थे, उनके भी प्रतिनिधियों को लिया गया। और उसी को पार्लियामेंट संज्ञा दी गयी। फिर भी राजा के सर्वाधिकार बने रहे। पार्लियामेंट केवल उपदेशक एवं सलाहकार (advisory and recommendary) के रूप में थी। पार्लियामेंट को सर्वाधिकारी (Supreme Authority) का रूप प्राप्त होने में और चार शतब्दियां लगीं। १६२८ में जो क्रांती हुई, जिसे वे गौरवपूर्ण क्रांती (Glorious Revolution of Britain) कहते हैं, उसके पश्चात ही निर्णायक रूप से प्रस्थापित हुआ कि पार्लियामेंट सर्वोच्च, और राजा का स्थान उस से निम्न रहेगा। फिर भी मतदान का अधिकार कितने लोगों को था ? बहुत थोडे प्रतिशत में था। अप्रैल १८३२ में उन्होंने एक कानून मंजूर किया जिसे 'लोकसत्ताक पद्धती में लम्बी छलांग' (a long leap in the way of democracy) कहा जाता है। उस के अनुसार कुछ गृहस्वामियों को मूल्यांकन के आधार पर मतदान का अधिकार प्राप्त हुआ। फिर भी मतदाताओं की मात्रा जनसंख्या के केवल १० प्रतिशत तक बढी। यह इ. १८३२ की छलांग भी बडे संघर्ष के बाद उन्हों ने प्राप्त की। उसके बाद फिर १८६७,

१८८२, १९१८ और १९२८- मे शनैः शनैः सुधार करते हुए १९२८-२९ में प्रौढ मतदान का अधिकार सबको मिला।

इंग्लंड मे मॅग्नाचार्टा हुआ, १२१५ मे किन्तु पार्लमेंट के लिए सब महिलाओंको मतदान का अधिकार १९१८ में मिला। सात शतब्दियोंके बाद। औ इतने लम्बे कालक्रम में अलग अलग हितों के गुट संगठित होते रहे, संघर्ष करते रहे। ७०० साल के संघर्ष के पश्चात् प्रौढ मताधिकार वहाँ आया। जहाँ संघर्ष चलता है वहाँ लोकशिक्षा भी होती है, संघर्ष के कारण एक संस्कार भी होता है। एक मानसिकता है।

हमारे यहाँ भी महिलाओं को अधिकार मिला है। प्रौढ मतदान का अधिकार है, लेकिन उसकी पृष्ठभूमी में घटनाचक्र क्या है? हमारे यहाँ यह कैसे हुआ? सांसदीय पद्धती हमारे यहाँ १९२० में आयी। किन्तु उस रचना के अंतर्गत कितने लोगोंको मताधिकार प्राप्त हुआ था? Council of State के लिए मताधिकार मिला १७,००० लोगों को। और National Assembly के लिये मताधिकार मिला ९ लाख ९ हजार लोगों को। कुल मिलाकर २४ करोड जनता में से ९ लाख २६ हजार को ही १९२० में मताधिकार मिला और १९५० में अचानक करोडों लोगोंको मताधिकार मिला। क्या इस में एवं संघर्ष के कारण निर्माण होनेवाले संस्कार, मिलनेवाली राजनैतिक शिक्षा-दीक्षा, दोनो में अंतर नहीं रहेगा?

जैसे कोई आदमी अपने कौशल से गरीबी में से उपर उठता है, एक-एक पैसे की बचत करता है, और धनी बनता है, अपना बंगला, और मोटरकार आदि लेता है, वह पैसे का मूल्य एवं प्रतिष्ठा जानता है। लेकिन चांदी का चम्मच ले कर पैदा हुआ उसका लडका, उस को कष्ट ही नहीं करने पडते, तो उस की जो मानसिकता होगी, और पिताजी की मानसिकता, इन में जो अंतर होता है उतना अंतर इंग्लंड और हमारी व्यवस्था मैं है, यद्यपि ढांचा समान है।

मेरा मतलब यह है की लोकशिक्षा ज्यादा से ज्यादा कैसे बढेगी और यह शिक्षा मात्र महाविद्यालयीन न होकर राजनीतिक प्रशिक्षण भी कैसे बढेगा, इसकी चिन्ता करनी चाहिये। नेता लोग यह काम नहीं करते, क्यों कि यदि लोग ही शिक्षित हो जायेंगे तो उनकी नेतागिरी का क्या होगा?

अतः प्रचार होता है, किन्तु शिक्षा नहीं होती। प्रचार का मतलब होता है आत्मस्तुती, परनिंदा। हम अच्छे है, बाकी सब लोग खराब है। इससे काम नहीं बनता। प्रौढ मताधिकार को यदि सफल करना है, तो लोकशिक्षण । सभी का, पूरा होना चाहिए हमारे देश का भी यही अनुभव है। केवल औपचारिक शिक्षा के द्वारा जिम्मेदार मतदाता पैदा होने की कोई शाश्वती नहीं।

इस सम्बन्ध में एक अच्छा उदाहरण रखनेयोग्य है। राळेगण सिद्दी स्थानपर श्री. अण्णा हजारे जी ने एक अच्छा काम खडा किया है। उसे देखने के लिए पुणे के कुछ सोशालिस्ट, 'प्रगतीशील' नेतागण गये। उनको यह देखकर धक्का लगा की अण्णाजी हजारेजी का कार्यालय एक मंदिर में स्थित है। वहाँ वे भजन-पूजन भी कर रहे थे, लोगों को इकठ्ठा करते थे। उस मंदिर का कुछ हिस्सा गिर गया था, जिसका पुनर्निर्माण कार्य उन्होंने शुरू किया था और उसके लिए ३०-४० हजार रुपये संकलित करने का प्रयास चल रहा था।

सारा परिसर देखकर लौटने पर चाय के समय एक 'प्रोग्रेसिव्ह सोशालिस्ट' नेता ने कहा। 'अण्णासाहेब, आपका कार्य अच्छा है, हम प्रभावित हुए हैं। किंतु एक बात नयी देख रहे हैं, आप लोगों मे अंधःविश्वास फैला रहे हैं। आप अपना मुख्यालय मंदिर में रखते है, तो लोग अंधःविश्वासी हो जाएंगे। मंदिर के पुनर्निर्माण हेतु आप पैसा क्यों खर्च कर रहे है? उस राशि से १-२ कमरे बन सकते है, जहीं प्राथमिक कक्षाएं स्कूल लग सकती है।'

अण्णासाहेब कुछ बोले नहीं। चाय के बाद उन्होंने कहा कि आपने सब दूर देखा, लेकिन हमारा फलों का बगीचा नहीं देखा। उसे भी देख आईये। बगीचा बहुत बडा था, उसे देखकर जब अभ्यागत लौटे, कहने लगे कि, 'हाँ, बहुत अच्छा है, आपने नए-नए प्रयोग किये हैं।'

अण्णासाहेब ने पूछा, 'क्या आपने वहाँ कुछ विशेष बात पर ध्यान दिया? आपने देखा होगा कि इस बगीचे में अच्छे-अच्छे फल लगे है, कुछ फल पक चुके हैं, जो गिरने की स्थिती में है, कुछ फल ऐसे है जो शीघ्र ही पक्व हो जायेंगे। किन्तु सारे बगीचे में एक भी रखवालदार नहीं है, एक भी चौकीदार नहीं है। आपको मालूम है, पहले हमारा यह गांव एक चोर, डकैत, बदमाशों का गाव समझा जाता था। अब पूरे बगीचे में कोई रखवालदार की आवश्यकता नहीं। क्या यह आपने देखा? ऐसा परिवर्तन क्यों हुआ है?।------

----आपने कहा कि यहाँ प्रायमरी स्कूल की दो कक्षाएं लगाने के बजाय, मंदिर का पुनर्निर्माण क्यों हो रहा है? मै पूछना चाहता हूँ- शिक्षा का महत्त्व तो है, मैं भी यहाँ विद्यालय चला रहा हूँ- किन्तु क्या औपचारिक शिक्षा के कारण अच्छा मनुष्य निर्माण होने की कोई शाश्वती है? हाल ही में जोशी-अभ्यंकर हत्याकाण्ड हुए थे। जिसमें हत्याएं करनेवाले ४-५ जो छात्र थे वे खातेपीते परिवार के, धनी परिवार के थे, उपाधिप्राप्त थे, किन्तु उन्होंने टी. व्ही. और सिनेमा देखकर शौकिया तौर पर १० हत्याएं की थी। आपके शहर में ऐसा हो सकता है। लेकिन हमारा गाँव जो चोर और डकैतों के लिए बदनाम था, वहाँ आज एक फल की भी चोरी नहीं होती। यह मंदिर का प्रभाव है। साधारण शिक्षा के कारण ऐसा प्रभाव नहीं हो सकता, मंदिर के कारण यह संस्कार हो सकता है।'

प्रोग्रेसिव्ह लोगों को क्या लगा होगा, पता नहीं। लेकिन शिक्षा और संस्कार इन में अंतर हैं। केवल शिक्षा के द्वारा जहाँ महान संत निर्माण हो सकते हैं, मायकेल जॅक्सन और कॅसिनोव्हा भी निर्माण हो सकते है। संस्कार यही महत्त्व की बात है।

परमपूज्य डॉक्टरजी देशभक्त थे, उनके समकालीन सभी राजनीतिक, गैर राजनीतिक कार्योंमें उन्होंने हिस्सा लिया था। सभी देशीविदेशी विचारधाराओं से उनका परिचय था। किंतु उनके मन में कुछ अस्वस्थता निरन्तर रहती थी। उनके निधन के पश्चात बंगाल के क्रांतिकारी - अनुशीलन समिती के ज्येष्ठ नेता श्री त्रैलोक्यनाथ चक्रवर्ती महाराज जी ने एक वक्तव्य दिया था। उन्होंने कहा कि, "केशवराव ने संघ की स्थापना तो १९२५ में की, लेकिन मुझे ऐसा लगता हैं की ऐसा कुछ कार्य प्रारम्भ करने का विचार उनके मन में बहुत सालों से चल रहा होगा। क्यों कि क्रांतिकार्य के लिए डॉक्टरजी जब बंगाल में थे, मुझे मिलते थे और कहते थे कि, महाराज जी, हम स्वराज्यप्राप्ती के लिए प्रयास कर रहें हैं यह तो बात ठीक ही है, क्योंकि कोई भी स्वाभिमानी राष्ट्र बरदाश्त नहीं कर सकता कि वह दूसरे किसी राष्ट्र की गुलामी में रहे। स्वाभिमानी राष्ट्र की यही माँग है कि स्वराज्य के लिए हम सारी कोशिश करें। ----- लेकिन हमारे राजनेता एक बात जनता को बता रहे हैं कि एक बार स्वराज्य हाथ लगने दीजिए, एक बार राजसत्ता हाथ में आने दीजिए,

सारी समस्याएं हल हो जायेंगी, सुलझ जायेंगी, प्रगती के रास्ते प्रशस्त हो जायेंगे। मुझे ऐसा नहीं दीखता। मुझे लगता हैं, जब तक हिंदुस्थान का हर एक नागरिक राष्ट्रभक्त नहीं होता, उसकी राष्ट्रीय चेतना का विकास नहीं होता, और ऐसे लोगों का संघठन नहीं होता, तब तक राष्ट्र को कोई आशा नहीं है, केवल राजसत्ता के भरोंसे यह नहीं हो सकता।''

अर्थात् ध्येयदर्शन करते समय डॉक्टरजी ने 'बायफोकल मिडियम' का परिचय दिया। 'बायफोकल व्हिजन' में नीचे की काच में से नजदीक का दीखता है, और ऊपरसे दूर का। एक और उन्होंने तात्कालिक लक्ष्य समझाया, 'स्वराज्य - हिंदू राष्ट्र का स्वराज्य'। वह शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त होना चाहिए। 'याचि देही याचि डोळा'। दूरदृष्टी की काच से उन्हों ने देखा 'परं वैभवम्' (Longrange vision) जब तक हर नागरिक राष्ट्रभक्त एवं राष्ट्रीय चेतना से युक्त होकर संघटित नहीं होता, देश के लिए कोई भविष्य नहीं। आज जो कुछ हो रहा है, वह ऊच्च शिक्षा किन्तु नीच संस्कारों के कारण हो रहा है। राष्ट्रसमर्पण के संस्कार जब तक नहीं आते और इस तरह आम जनता जब तक संस्कारित नहीं होती, उनका संघठन नहीं होता तब तक देश को केवल राज्यकर्ताओं के भरोंसे छोडना खतरे से खाली नहीं। लोकशक्ती का, जनशक्ती का दबाव राज्यशक्ती पर रहने पर राजशक्ती को ठीक ढंग से चलना ही पडेगा। धर्मदंड रहेगा तो राजदंड ठीक चलेगा; लेकिन अगर जनता में जागृति न हो, राष्ट्रीय चेतना का स्थैर्य न हो, दूसरे शब्दोंमें 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ' यदि कमजोर रहा, तो फिर राजसत्ता के ठीक ढंगसे चलने की कोई शाश्वती नहीं। राजशक्ती के ऊपर लोकशक्ती का दबाव होना होगा। राजसत्ता हाथी के समान है, अंकुश की आवश्यकता है। हमारी परंपरा में समाज का नैतिक नेतृत्व ही इस हाथी के गंडस्थल पर बैठकर जनशक्ती के रूप में अंकुश रखता था।

आज देश में जनसंघठन मजबूत नहीं है, नैतिक नेतृत्व विकसित नहीं हुआ हैं। नीतिमान नेता थे, लेकिन अकेले-अकेले थे। 'सामाजिक नेतृत्व' का निर्माण नहीं हो पाया था। जनशक्ती अर्थातच संघ की शक्ती इतनी पर्याप्त होना आवश्यक हैं कि कोई भी पक्ष सत्तारूढ हो जाये, संघ की शक्ती उस पर अंकुश रखे। नक्षलवादी भी सत्ता में आ जायेंगे तो भी राष्ट्रीय नीति तय करने के पहले प्रधानमंत्री को डॉ. हेडगेवार भवन आना पडेगा, इतनी शक्ती जब तक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की नहीं होती, तब तक हम अथक प्रयास करें।

स्वतिश्री प्रकाशने

१.	चार पुरुषार्थ	डॉ. श्री. देशमुख	—
२.	यक्षप्रश्न	प्रा. अनंतराव आठवले	रु. ४०
३.	पूर्वरंगतरंग	स्वामी वरदानंद भारती	रु. ४५
४.	पूर्वरंगतरंगिणी	स्वामी वरदानंद भारती	रु. ५५
५.	श्रीसमर्थ अभिप्रेत लोकनेता	संकलन (मराठी)	रु. १५
६.	श्रीसमर्थ अभिप्रेत लोकनेता	संकलन (हिंदी)	रु. ६
७.	हिंदू धर्म समजून घ्या	स्वामी वरदानंद भारती	रु. १५
८.	संघ प्रार्थना	स्वामी वरदानंद भारती	रु. २०
९.	राष्ट्रीय समाजापुढील आव्हाने	श्री. दत्तोपंत ठेंगडी यांचे उद्‌बोधन पुणे २८-७-९६	रु. १५
१०.	साधक-साधना	स्वामी वरदानंद भारती	रु. ७५
११.	कर्मविचार	संकलन स्वामी वरदानंद भारती व श्रीधरस्वामींच्या ग्रंथांतून	रु. ३०
१२.	कथा संस्काराच्या संस्कृतीच्या	संकलन स्वामी वरदानंद भारती यांच्या ग्रंथातून	रु. ३०
१३.	Changing Horizons and Emerging Challenges before the Nationalists	By Dattopant Thengdi Pune (28-7-96)	Rs. 20/-
१४.	बदलते परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय समाज के सामने खड़ी चुनौतियां (हिन्दी)	श्री. दत्तोपंत ठेंगडी का उद्‌बोधन - पुणे २८-७-९६	रु. २०/-
	आगामी प्रकाशन		
१५.	ध्येयदर्शन	प. पू. श्रीगुरुजीं के बौद्धिक वर्ग - संकलन	रु. ३५/-

परिचय

श्री. दत्तोपन्त बापूरावजी ठेंगडी (जन्म १९२०, आर्वी, जिला वर्धा) एक द्रष्टा एवं राष्ट्रवादी चिन्तक के रूप में ख्यातिप्राप्त हैं। सौ से अधिक पुस्तकों एवं सैंकड़ो लेखों का उन का साहित्य प्रेरणादायी है।

अपनी किशोरावस्था में ही वे राष्ट्रसेवा के कार्य में जुट गये, एवं विगत ५० से अधिक वर्षों में उन्हों ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से प्राप्त प्रेरणा के फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों में मौलिक कार्य खड़ा किया है। श्रमिक संगठन के कार्य में भारतीय मजदूर संघ के माध्यम से उन्हों ने असीमित सफलता पायी है जिस का, बीएमएस् को अखिल भारतीय स्तर पर प्रथम स्थान प्राप्त होना, ठोस प्रमाण है। इस के अतिरिक्त भारतीय किसान संघ, स्वदेशी जागरण मंच जैसे महत्त्वपूर्ण कार्यों की नींव के वे पत्थर हैं। यूरप, आशिया एवं अमरीका समेत कई विदेशों की यात्रा के कारण उनका व्यक्तित्व आंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी विचारक के रूप में सर्वज्ञात हो चुका है।

उन की व्यस्तता के बावजूद जो मौलिक साहित्य उन की लेखनी एवं व्याख्यानों द्वारा उपलब्ध है उस से हजारों कार्यकर्ताओं को दिशादर्शन प्राप्त होता रहा है। उन का 'द हिंदू वे' वर्तमान स्थिती में सुयोग्य विकल्प की ओर इंगित करता है।

इस मूल हिन्दी व्याख्यान में उन्होंने पुराने भ्रम, एवं नये भ्रम पैदा कर किस प्रकार हमारे बुद्धिनिष्ठों को गलत मार्ग पर सोचने बाध्य किया जा रहा है, इस पर विशेष ध्यान आकृष्ट किया है, जिस के फलस्वरूप राष्ट्रीय समाज के सामने खड़ी चुनौतियों पर गहरे चिन्तन की आवश्यकता प्रतीत होती है।